हिमकथा
मानव-प्रकृति के अंतरंग रिश्ते

वॉल्युम 2, अंक 1
वसंत, 2021

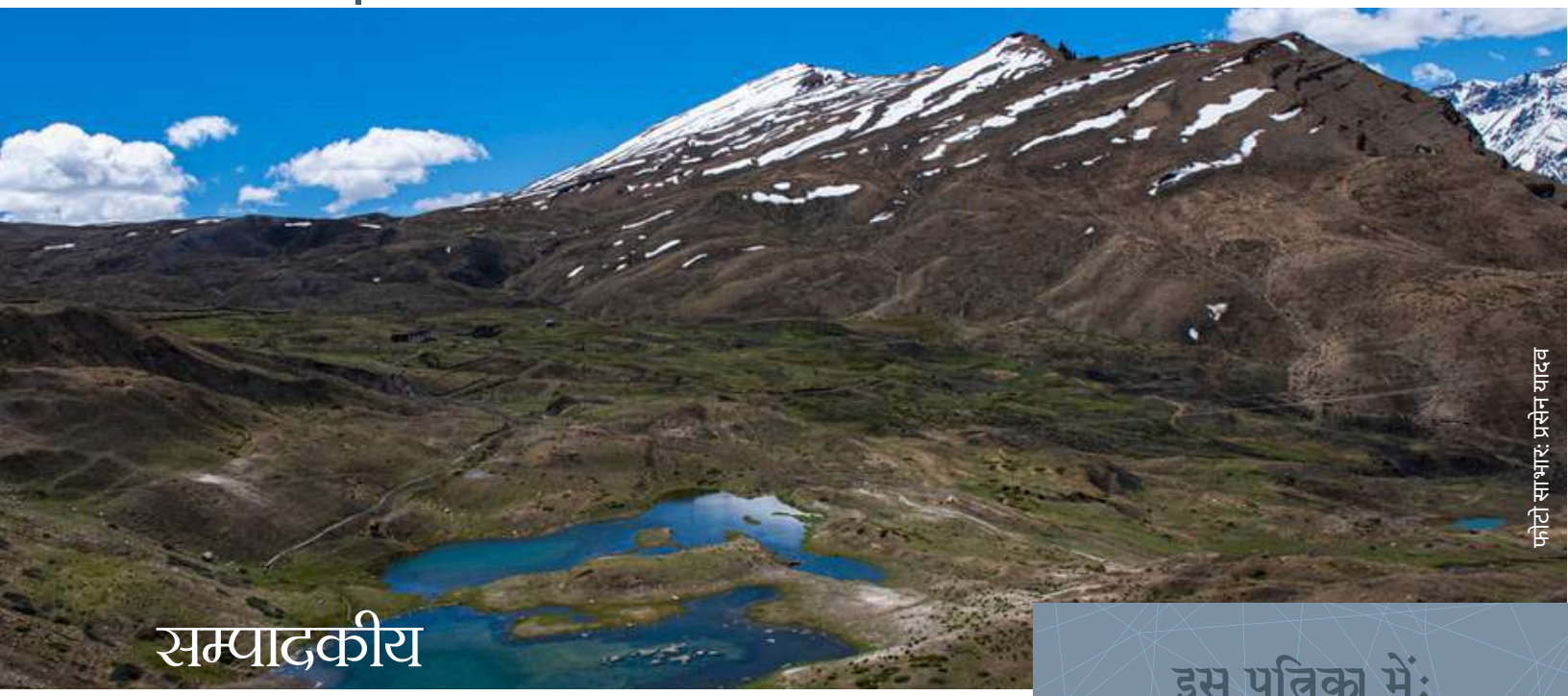

फोटो साभार: प्रसेन यादव

सम्पादकीय

कहानियों में बड़ी शक्ति होती है। बस कुछ शब्दों को पिरोने से वह गहरे अहसासों को उकसा देती हैं या उन पुरानी यादों को ताज़ा कर देती हैं जो फीकी पड़ गई हों। पीढ़ी दर पीढ़ी कही गई कहानियों को सभ्यताओं के लचीलेपन के लिऐ जिम्मेदार ठहराया गया है। कहानियों के जरिये ज्ञान को जीवंत बनाए रखा जा सका है। हिमालय के दूरदराज क्षेत्रों में भी कहानियाँ हजारों साल से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती आई हैं। आज के बदलते दौर में भी इन क्षेत्रों के समुदाय और गर्व की भावना हमें हैरत में डाल देती है, क्योंकि यहाँ कि पीढ़ीगत कहानियों का मूलतत्व सजीव संस्कृति को आपस में थामे रखा है।

हिमकथा का मुख्य लक्ष्य इन्हीं कहानियों को एक-दूसरे के साथ बांटना और प्रकृति के साथ मानवों के रिश्ते का यशगान करना है। 2020 के पतझड़ में हमने हिमाचल प्रदेश के ऊपरी क्षेत्रों की कहानियों के पहले सैट को पाठकों के साथ साझा किया था। कुछ मुट्ठी भर समर्पित स्थानीय जुझारू लोगों की मदद से हम इस न्यूज लैटर को लाहौल-स्पीति, ऊपरी किन्नौर और पांगी तक पहुंचा पाए।

2021 के हमारे इस वसंत अंक में हम आपके लिए ऐसी कहानियाँ लाए हैं, जो मिट्टी और पानी की विषय-वस्तु से जुड़ी हैं। ये दोनों ही तत्व हिमालय के

इस पत्रिका में:

बदलते जलवायु की अनुगामी
PAGE 01

मेरी दादी मां की अविस्मरणीय यादें
PAGE 04

किब्बर के जल प्रबंधक
PAGE 08

स्पीति घाटी में शुष्क शौचालयों का पर्यावरणीय महत्व
PAGE 10

लाहौल-स्पीति और किन्नौर 2020 में अनाज और सब्जियों की कीमतें
PAGE 14

यंग एक्सप्लोरर्स
PAGE 15

हिमालयी कृषि
PAGE 18

खेतिहर-मवेशीपालक समुदायों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। संस्कृति और विभिन्न परम्पराओं के माध्यम से उच्च हिमालयी क्षेत्र के लोग इन मूल्यवान संसाधनों को सक्रिय रूप से संरक्षित करते आए हैं। यह न्यूज लैटर संरक्षण से जुड़ी ऐसी ही कुछ कहानियों को समर्पित है।

पहली कहानी हमें विरेन्द्र ने भेजी है जिन्होंने चम्बा के गद्दीयों के साथ कुछ समय बिताया है। विरेन्द्र ने हर साल गद्दीयों द्वारा बेमिसाल चरागाहों तक पहुंचने के लिए की जाने वाली मुश्किल यात्रा के बारे में लिखते हुए बताया है कि कैसे जलवायु परिस्थितियों के कारण ये चरागाह बदल रहे हैं। इसके बाद आप चैमी की कहानी पढ़ेंगे, जिन्होंने हिमालय में अपनी दादी माँ के साथ बीती जिन्दगी से जुड़ी यादों को हमारे साथ बांटा है। अगली कहानी हमें रंजिनी ने भेजी है, जो अपने मित्र के साथ हुई बातचीत को याद कर रही हैं कि जल-प्रबंध के मामले में महिलाओं की क्या भूमिका होती है। इसके बाद आप सोनम का एक निबंध पढ़ेंगे जो अभूतपूर्व विकास के इस दौर में शुष्क शौचालयों के बढ़ते महत्व के बारे में बता रही हैं। और अंत में अमशु, जो इस पूरे इलाके में पारंपरिक फसलों को फिर से उगाने के लिए किसानों के साथ काम कर रही हैं, अपने लेख में वे इन स्थानीय फसलों के लाभों की चर्चा कर रही हैं।

हमारे युवा पाठकों के लिए भी न्यूज लैटर में एक खंड है। इस खंड में, लालुंग (स्पीति) की एक युवा लेखिका पसांग अपने गांव के घर के बारे में, अपनी पहली पुस्तक के जरिये हमारे साथ कुछ विवरण साझा कर रही हैं। और अंत में मुम्बई के राहुल का एक पत्र है, जिसे उन्होंने पहाड़ के लोगों की कठिन जिन्दगी के प्रति अपनी चिंताएं व्यक्त करते हुए लिखा है।

हमें आशा है कि आप अलग-अलग आयु वर्गों के लेखकों और स्थानों से संबंध रखने वाली इन कहानियों को पढ़ कर आनंदित होंगे। हम ये भी उम्मीद करते हैं कि आप इन कथाओं के बारे में अपने विचार हमारे पास भेजने के अलावा अपने सुझाव भी देंगे।

दीपशिखा शर्मा
नेचर कंजर्वेशन फाउंडेशन

फोटो साभार: प्रसेन यादव

बदलते जलवायु की अनुगामी

वीरेन्द्र माथुर

हिमाचल प्रदेश के उत्तर पश्चिम भाग में स्थित भरमौर और लाहौल नामक मिथकीय क्षेत्र में, हर साल एक सामयिक घटना घटित है जो की स्थानीय संस्कृति और प्रकृति के बीच एक अनोखे सामंजस्य को दर्शाती है। गद्दी पाल के इस पारंपरिक गढ़ में, इस समुदाय को, सैमी-नोमैडिक, ट्रांसह्युमैंट पास्टोरैलिस्ट या एग्रो पास्टोरैलिस्ट कहा जाता है। गद्दी परिवारों के अक्सर पुरूष गर्मियों (अप्रैल) के शुरुआत में, अपनी भेड़ बकरी के झुंड को इकट्ठा कर एक प्रवासी यात्रा पर चल पड़ते हैं, और इस झुंड को ऊंचाई वाले क्षेत्रों के चरागाहों तक ले जातें हैं। निरंकुश फैले इन चरागाहों को, जिन्हें अंग्रेजी में "अल्पाइन मेडोज" कहा जाता है, उन्हें गद्दी पाल 'धार' कहकर पुकारते हैं। यह सामयिक यात्रा बहुत से स्तर पर अविस्मरणीय है - इससे गद्दी परिवार की अर्थव्यवस्था को सहारा मिलता है, क्योंकि उसे कृषि पर बहुत ज्यादा निर्भर नहीं रहना पड़ता। इसके अलावा गद्दियों के झुंड, उन जुते हुए खेतों को खाद भी मुहैया कराते हैं, जिनसे होकर वे गुजर रहे होते हैं, और बदले में इन्हें आहार और रूकने की जगह मिलती है। ये विनिमय प्रणाली आज भी जारी है। और गद्दी द्वारा इस प्रकार की प्रथा अपनाने के कारण उन्हें अल्पाइन धार पर चराई के लिए अनुचित दबाव डाले बिना कम गुणवत्ता वाले चरागाहों पे निर्भर नहीं रहना पड़ता है।

गद्दी पाल जब कांगड़ा घाटी के कम ऊंचाई वाले इलाकों और पठानकोट के मैदानों से अपनी यात्रा शुरू करते हैं, तब कई कस्बों और गांवों से गुजरते हैं। ये लोग धौलाधार पहाड़ी श्रृंखला को पार करके चम्बा जिले की ओर बढ़ते हैं, और उत्तर भीतरी हिमालय में मौजूद ऊंचाई वाले चरागाहों की ओर चले जाते हैं। इस मुश्किल यात्रा में इनके साथ इनके मवेशी होते हैं, जिन्हें ये 'धण' कहते हैं हिंदी में जिस शब्द का अर्थ दौलत या पैसा होता है। भेड़ों और बकरियों का झुंड, इस समुदाय के लिए आमदनी का एक लचीला और निरंतर स्रोत होता है, क्योंकि जमीन के छोटे-छोटे टुकड़ों के मालिक होने के कारण इन्हें खेती से ज्यादा आय नहीं हो पाती। तो ये झुंड इन्हें मांस, दूध, फ्लीस और ऊन मुहैया कराते हैं। गद्दी भेड़ों से जो ऊन मिलती है, उससे गर्म कपड़े बनाए जाते हैं, और ये ऊन उस बाजार में बढ़िया क्वालिटी की मानी जाती है जहां गुणवत्ता के आधार पर ही ऊन का दाम तय होता है ।

हिमाचल प्रदेश स्टेट वूल फैडरेशन (हिमाचल प्रदेश राज्य ऊन महासंघ) की वैबसाइट पर सरकार द्वारा दिए जाने वाले न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी) को दर्शाया गया है, जो वह कटे हुए ऊन के लिए देती है। जो ऊन जनवरी-फरवरी के सर्दी वाले महीनों में काटी जाती है, उसके लिए प्रति किलो सबसे कम दाम दिए जाते हैं, और जो ऊन पतझड़ में (सितम्बर या अक्टूबर में) काटी जाती है, उसके लिए सबसे ज्यादा दाम दिए जाते हैं, क्यूंकि तब भेड़ों के झुंड ऊंचाई पर स्थित चरागाहों से उच्च गुणवत्ता वाली घास चरके नीचे

कुगती गांव के उत्तर-पूर्व में धार में चरने के बाद भेड़ और बकरी के झुंड लौटते हैं; फोटो सौजन्य वीरेंद्र माथुर

राज्य सरकार द्वारा तय की गई ऊन की दरें			
वर्ष	**दर प्रति किलो, रूपये में**		
	सर्दियों में कटी ऊन	**गर्मियों में कटी ऊन**	**पतझड़ में कटी ऊन**
2017 - 18	**सफेद ऊन** (34.10) **सफेद क्रॉसब्रेड** (40.92) **काली ऊन** (25.50)	**सफेद ऊन** (42.35) **सफेद क्रॉसब्रेड** (50.82)	**सफेद क्रॉसब्रेड** (78.00) **काली ऊन** (45.00)
2018 - 19	**सफेद ऊन** (31.00)	**सफेद ऊन** (38.50)	**सफेद ऊन** (65.00)
2019 - 20	**सफेद क्रॉसब्रेड**;(37.20) **काली ऊन** (25.50)	**सफेद ऊन**:(38.50) **सफेद क्रॉसब्रेड**:(46.20)	**सफेद ऊन**:(65) **सफेद क्रॉसब्रेड**;(78.00) **काली ऊन** :(45.00)

आभारः हिमाचल प्रदेश राज्य कोऑपरेटिव वूल प्रोक्योरमैंट एंड मार्केटिंग फैडरेशन लिमिटेड (एच.पी.वूलफैड), शिमला

वापिस आए होते हैं। मैंने जिन गद्दियों का इंटरव्यू लिया, उन्होंने इसे 'ए' ग्रेड ऊन बताया। उनका कहना था कि ऊंचाई वाले चरागाहों में औषधीय जड़ी-बूटियाँ, झाड़ियाँ और बढ़िया घास इन जीवों को खाने को मिलती है, जिनमें ज्यादा पौष्टिकता होती है, और इसी वजह से उनकी ऊन पतझड़ में ज्यादा अच्छी और घनी होती है।

इन चरागाहों तक पहुंचने के सफर से भी ज्यादा मुश्किल है ऊंचाई पर स्थित धार पर रहना होता है। मैंने एक गद्दी से पूछा कि वहाँ जिंदा रहने के लिए सबसे महत्वपूर्ण महारत क्या होती है, तो उसने बताया, "किसी जानवर के साथ रहने के लिए, आपको जानवर ही बनना पड़ता है।" इससे ऊंचाई वाले चरागाहों में जीवन से जुड़ी मुश्किलों का अनुमान लगता है। जब गद्दी इन चरागाहों में पहुंचते हैं, तो बर्फ पिघल रही होती है, और उसके नीचे इन भेड़ों और बकरियों के झुंड के लिए भरपूर घास उग रही होती है। ऊंचाई पर स्थित धार में ये चरागाह क्षितिज तक फैले नज़र आते हैं ,ऐसा प्रतीत होता है की दूर तक फैले यह विशाल कालीन धीरे-धीरे रंग बदल कर हरे हो रहे हों। यहाँ इन्हें अपने धण के दिशा-निर्देशन लिए कोई खास चिंता नहीं होती, असली चुनौती पर अपने इन जानवरों को मुश्किल परिस्थितियों में सुरक्षित रखने की होतो है। मवेशी और गद्दी एक दुसरे पर निर्भर होते हैं। गद्दी अपने परिवार से दूर होने के कारण इन्हें ही अपना परिवार मानते हैं। देखरेख से जुड़े इस रिश्ते का गहरा संबंध ऊन से है। और ये रिश्ता पैसे से आगे बढ़ते हुए भावनात्मक महत्व का हो जाता है। चरवाहों को ऊन से पैसे मिलते हैं, और यही ऊन फिर से इन गद्दियों के सफर के साथ कभी इनके कम्बल, तो कभी शॉल की शक्ल में नजर आती है। ये काटी हुई ऊन का कुछ हिस्सा अपने लिए रखते हैं, और इसका इस्तेमाल अपनी पारंपरिक पोशाक, शॉल और कम्बल बनाने के लिए करते हैं जो अकड़ाने वाली ठंड से इन्हें बचाए रखती है। जब कोई भेड़ और बकरी का मेमना पैदा होता है, तो उसे ऐसे ही कम्बल में लपेट कर गद्दियों के तम्बू में रखा जाता है, और ऊंचाई वाले इन चरागाहों में लम्बे सफर के दौरान इन मेमनों को कम्बलों के अंदर लपेट कर ले जाया जाता है। इस परिवार में हर सदस्य की अहमियत है। और कभी-कभी गद्दी अपने झुंड को बचाने के लिए अपनी जान भी दांव पर लगा देते हैं। दो अलग-अलग घटनाओं में, चरवाहों का एक समूह रात में अपनी भटकी हुई बकरियों को काले भालू से बचाने गया, और एक दिन थापु नाम का नौसिखिया चरवाहा एक ग्लेशियर की धारा में कूदा और मोटी हिमनद परत को तोड़ कर उसमें गिरी हुई एक भेड़ और एक मेमने को बचाया। उसका कहना था कि किसी चरवाहे को अपने झुंड की हर भेड़-बकरी की जान बचानी होती है, इससे उसके मालिक को भरोसा हो जाता है कि वो कितना विश्वास के योग्य है। इसमें कोई शक नहीं कि चरवाहे प्रकृति के मुश्किल मिजाज के हिसाब से ढल गए हैं, लेकिन क्या कठिन परिस्थितियों में डेट रहने की उनकी क्षमता, हिमालय के अंदुरूनी हिस्सों में हो रहे जलवायु संबंधी बदलावों के प्रभाव को झेलने लायक खूबी इन्हें देगी?

कई मायनों में गद्दी और उसके झुंड की जिन्दगी हिमालय के चरागाहों में होने वाले मौसमी बदलावों के साथ गहराई से जुड़ी होती है। इन चरवाहों को शायद जलवायु परिवर्तन शब्द मालूम न हो, पर ये समझ रहे हैं कि गर्मियों के इनके इस आशियाने में बदलाव तो आ रहा है। बारिश का विन्यास अनियमित हो गया है और यह गद्दी समुदायों की रोजी-रोटी पर नकारात्मक असर डाल सकता है। ज्यादा बारिश से भी मवेशियों की मृत्यु दर बढ़ सकती है, क्योंकि ज्यादा नम वातावरण में ये कई बीमारियों का शिकार हो जाते हैं। और अगर बारिश कम हो तो ऊंचाई वाले चरागाहों में घास और जड़ी-बूटियों की बढ़वार में कमी आ जाती है, जैसे कि पिछले साल हुआ।

हालात खुर वाले बड़े पहाड़ी जीवों की वजह से और खराब हो रहे हैं, जो इन भेड़ बकरियों के लिए जरूरी पोषक घास खा जाते हैं। इन लोगों ने मुझे बताया कि चुर कहलाने वाले जीव से भी परेशानी रहती है। हिमालय क्षेत्र में इसे आमतौर पर 'ड्ज़ो' कहा जाता है जो याक और गाय की एक संकर नस्ल है। घास खाने वाले इन विशाल जीवों को ऊंचे हिमालय में रहने वाले ग्रामीण खेती के लिए पालते हैं। ये विशाल जीव ऊंचाई वाले चरागाहों में, हिमालयन आइबैक्स और हिमालयन ताहर, खच्चरों और घोड़ों जैसे खुर वाले जीवों के साथ चरते हैं। बड़े शाकाहारी जीव ताजा उगी घास खा जाते हैं, जिससे भेड़ों और बकरियों के लिए पर्याप्त घास नहीं बचती। इसी तरह मौसम के मिजाज में बदलाव आने से भी इन चरागाहों में चराई की अवधि छोटी हो सकती है, इससे ताजा घास की बढ़वार पर असर पड़ता है, और लम्बी अवधि में इन चरागाहों की उत्पादकता भी घटती है। पोषण संबंधी गुणवत्ता घटने से भेड़ों की ऊन की क्वालिटी भी प्रभावित होती है।

सुभाष भाई और सोनू भाई भेड़ पर से ऊन काट रहे हैं। इन भेड़ों पर से ऊन एक वर्ष में तीन बार काटी जाती है, और जबकि कुछ चरवाहों इन कैंची का उपयोग करते हैं, अन्य चरवाहे ऊन की छंटाई के लिए ट्रिमर का उपयोग करते हैं; फोटो सौजन्य वीरेंद्र माथुर

वीरेंद्र माथुर

वीरेंद्र माथुर टोरोंटो विश्वविद्यालय से विकासवादी नृविज्ञान में पीएचडी कर रहे हैं। वह प्रशिक्षण द्वारा एक प्राइमेटोलॉजिस्ट है और अपने डॉक्टरेट के काम के लिए हिमालयन लंगूर की अपने स्थानिक अवलोकन और एक इलाके में संचार की रणनीतियों का अध्ययन करने में रुचि रखते हैं। कुगती वन्यजीव अभयारण्य में अपने फील्डवर्क के भाग के रूप में, वह भरमौर के कुगती गांव में गद्दी समुदाय के साथ भी मेलजोल रखते रहे हैं और इन चरवाहों के अनुभवों के बारे में अधिक जानने का प्रयास कर रहे हैं। वीरेंद्र हिमालय में रह रहे समुदायों और संस्कृति के प्रकृति के साथ संबंध को समझने में और हिमालय की प्राकृतवास के संरक्षण के लिए इन्ही लोकल समुदायों को भागिदार बना एक सहयोगी ढांचा विकसित करने के लिए भी उत्सुक हैं।

आभार:

वीरेंद्र अपने इस कार्य के लिए वाइल्डलाइफ कंज़र्वेशन ट्रस्ट को धन्यवाद् देना चाहतें है जिनके स्मॉल ग्रांट्स प्रोग्राम ने उनके कुगती गाँव में किये गए फील्डवर्क के लिए अनुदान राशि प्रदान की। वह विनम्र और प्यारे गद्दी समुदाय का तहेदिल से आभार व्यक्त करते हैं जिनके उदारवादी, हंसमुख, जीवंत, और मददगार स्वभाव ने उन्हें हमेशा घर जैसा ही महसूस कराया

आज प्राकृतिक ऊन के बाजार को सिंथैटिक ऊन से जबर्दस्त मुकाबले का सामना करना पड़ रहा है, और इससे गद्दियों के लिए इस बाजार में टिके रह पाना मुश्किल हो गया है। ऊन के पारंपरिक इस्तेमाल में कमी आती जा रही है, इसकी आंशिक वजह ये है कि इस काम से संबंधित ज्ञान एक से दूसरी पीढ़ी तक नहीं पहुंच पा रहा है, साथ ही लोगों को शहरों में रहना ज्यादा भा रहा है, तो कारोबारी और शिल्पकार भी आयातित ऊन इस्तेमाल करना बेहतर समझते हैं। इन बदलावों को ध्यान में रखते हुए, अगर प्रबंधन संबंधी सही प्रणालियाँ अपनाई जायें हैं, तो उच्च हिमालय क्षेत्र में पारंपरिक कृषि-ग्रामीण जीवन प्रणाली बची रह सकती है। इस काम से जुड़े गद्दी चरवाहे एक सांस्कृतिक विनिमय का गतिशील माध्यम हैं, और अपने संसाधनों के विनिमय के जरिये कृषि से जुड़े विभिन्न समुदायों की आर्थिक जरूरतों को पूरा करते हैं। इस प्रकार, हिमालय में पारगमन में हो रही कमी ऊंचाई वाले समुदायों में पोषक चक्र के प्राकृतिक चक्रों के नुकसान पर परस्पर प्रभाव डाल रही है और संभवतः इसके दुष्प्रभाव का अनुप्रवाह हमें सहना पड़ सकता है।

मेरी दादी माँ की अविस्मरणीय यादें

चैमी ल्हामो

जब मैं छोटी थी, तो मुझे याद है मेरी इवी (दादी माँ) रोजाना सुबह प्रार्थना करने के लिए मुझे युल-सा (गांव के देवता का बौद्ध मठ) ले जाया करती थी। वे मुझसे मक्खन वाले दीपक जलाने को कहती, वे स्वयं इस दौरान वेदी की परिक्रमा करती थीं और फिर मेरे साथ प्रार्थना करने लगती थीं। मैं प्रार्थना में मांगती थी कि घर में लगातार बिजली आती रहे, ताकि मैं पूरे दिन टेलीविजन देख सकूं। मैं तब 8 साल की थी, और मुझे ये जानने की बड़ी उत्सुकता रहती थी कि आखिर इवी ने प्रार्थना में क्या मांगा होगा। तो कई बार वो मुझे टाल देती थीं फिर आखिरकार उनहोंने बताया की प्रार्थना में उन्होंने अच्छी बर्फ मांगी है, जिससे गर्मियों के दौरान खेतों और जानवरों के लिए पर्याप्त पानी मिल सके। वे लगातार कहा करती थीं, "हमें हमेशा सभी जीवों के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, ऐसा करने से तुम्हारी निजी इच्छाएं खुद बखुद पूरी हो जाएंगी। हमें शांति, समृद्धि और भरपूर हिमपात के लिए प्रार्थना करनी चाहिए।"

इवी, ताशी-गांग नामक, स्पीति के एक शांत गांव से थीं, जहां भरपूर हरे-भरे चरागाह थे, और 6 से भी कम परिवार रहते थे। विवाह के समय उनकी उम्र काफी कम थी, और वे कोवांग में रहने आ गई थीं। अपनी पीढ़ी की, स्पीति की किसी भी आम महिला की तरह, एवी हमेशा परिवार के कल्याण के लिए काम करती रहीं, वे हमारे खेतों की, मवेशियों की देखरेख करती थीं, और हमारे पुश्तैनी घर में तब तक अकेली रहती रहीं, जब तक वो ऐसा कर पाईं।

आपा मुझे बताते थे कि इवी को अपनी जमीन से गहरा लगाव था। "हमारी शिंगा (खेतों) और हमारे जोमो (मादा हाइब्रिड याक) के बीच कोई अंतर नहीं है। वे हम सभी

पहली कटाई के बाद ग्राम देवता को अनाज का चढ़ावा: कोवांग स्पीति; फोटो साभार: चेमी ल्हामो

का ध्यान एकसमान रूप से रखती थीं।" उन्होंने 15 साल की उम्र से खेतों में काम करना शुरू कर दिया था, और 50 साल तक करती रहीं। वे हमारे सभी खेतों में जुताई करतीं, मवेशियों को पालती और सर्दियों के लिए गोबर और सूखे तिनके इकट्ठा करने के लिए हमारे गांव के ऊंचे पहाड़ों पर जाया करती थीं। जब उनकी उम्र ज्यादा हो गई, तो वे कुछ समय के लिए हमारे साथ रहीं, और वे अक्सर मुझे अपनी जवानी के दिनों की कहानियाँ सुनाया करती थीं। उन्हें मेरे पिता, मेरे चाचा के बचपन की बहुत सी बातें याद थीं, और वे जानवरों के बड़े से झुंड को अक्सर याद करतीं, जिन्हें उन्होंने बड़े प्यार से पाला था, उन्हें मरे हुए मवेशियों, और बीमार बकरियों की बातें भी भूली नहीं थी, जिनका वो ध्यान रखती थीं। वे नए जन्में बच्चों, और हमारे ड्ज़ो (हाइब्रिड याक) का बड़ा ध्यान रखती, जो कुछ साल पहले बड़े रहस्मय ढंग से गायब हो गया था। उन्हें हमारी जमीन की उर्वरता, हमारे गांव के छू-मिग (सोते के पानी) और हमारे मवेशियों पर बड़ा गर्व था, साथ ही खांगचेन (जमींदार) परिवार से जुड़ी होने के वजह से उनकी जिन्दगी खेती और ग्रामीण जीवनशैली को समर्पित थी। वे खेती वाले परिदृश्य से इतने करीब से जुड़ी हुई थीं कि यह उनकी पहचान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया था।

ताशी-गांग की ही तरह, कोवांग भी एक छोटा सा गांव है जिसमें सिर्फ 4 या 5 परिवार रहते हैं। पर इवी ने इन पहाड़ों, खेतों, नदी के किनारों और बंजर भूमि के विशाल हिस्सों को अपना ही घर मान लिया था। अक्सर सुनने को मिलता था कि वे बड़ी उग्र स्वभाव की थीं। वे अपने खेतों में कड़ी मेहनत करती थीं और उनका हुक्म चलता था। स्पीति में खेती और उससे जुड़ी गतिविधियों को सामुदायिक घटना माना जाता है, जिसमें हर कोई हिस्सा लेता है, और यह 'भे' नामक प्राचीन परम्परा का ही एक भाग है, इसमें लोग एक-दूसरे की मदद करते हैं, और इससे समुदाय के सदस्यों और परिवारों के बीच गहरा जुड़ाव पैदा होता है। बौद्ध उपदेशों से इस बात को और बल मिलता है, क्योंकि ये उपदेश पर्यावरण और धार्मिक आस्थाओं को आपस में बांधते हैं। इनमें समुदाय में सहयोग और एक-दूसरे की सहायता जैसे मूल्यों पर जोर दिया जाता है। लेकिन वास्तविकता इससे कहीं ज्यादा पेचीदा है और गांवों की गतिशीलता खेती से जुड़ी जिम्मेदारियों के सिलसिले में एक बड़ी भूमिका निभाती है। भूमि के स्वामित्व, संसाधनों तक पहुंच और फैसले लेने जैसी बातों पर, किसी समुदाय के अलग-अलग सदस्यों के बीच मौजूद, सत्ता की असमान अवस्था अपना असर डालती है।

हालांकि खेतों में पुरूष और महिलाएं, दोनों ही काम करते हैं, लेकिन दोनों के कामों की प्रकृति अलग-अलग होती है। स्पीति के पुरूष मेहनत वाले काम करते हैं,

पैतृक घर जहां एवी रहती थी, फोटो साभार: चेमी ल्हामो

चैमी ल्हामो

चैमी, स्पीति के कोवांग गांव से है जिसमें सिर्फ पांच परिवार रहते हैं। उन्होंने दिल्ली यूनिवर्सिटी से लिटरेचर में पोस्ट ग्रैजुएशन की है। उन्होंने दो वर्ष से भी अधिक भारतीय विकास क्षेत्र में कम्यूनिकेशन प्रोफैशनल के तौर पर काम किया है और हाल ही में एनसीएफ के हाई ऑल्टीट्यूड प्रोग्राम से जुड़ी हैं, ताकि भारत के उच्च-हिमालयी क्षेत्रों में संरक्षण पर काम कर सकें।

जैसे कि - हल चलाना, फसल काटना और मवेशियों को चराना, जबकि महिलाएं बहुत से छोटे-मोटे काम करती हैं, (ये काम कम दिखते हैं) जैसे कि - खर-पतवार निकालना, खेतों को समान बनाना, पानी की नालियां बनाना, सिंचाई, फटकना, खाद्यान्न को पीसना और शुष्क शौचालयों से खाद निकालना। ये काम दिखने में छोटे लगते हैं, लेकिन इनका महत्व कम नहीं। इनमें समय लगता है, खेती संबंधी काम में जबर्दस्त मदद मिलती है, लेकिन इनकी अक्सर अनदेखी होती है। कृषि संबंधी श्रम और संसाधनों के आबंटन में मौजूद ये अंतर सामाजिक अंतरों को दर्शाते हैं, जहाँ खांगचेन परिवारों में पुरूषों का पलड़ा ज्यादा भारी रहता है। कहते हैं - 'आने गी लेया ला सिरूक मेकाक' (यानी महिलाओं के काम का कोई मूल्य नहीं है) ये वाक्य अक्सर महिलाओं के असंतोष को दर्शाने के लिए इस्तेमाल होता है।

मुझे याद है, मैं इवी की इस बात पर खूब हंसती थी, जो वो मेरे 'मे-मे' (दादा) के बारे में बताती थी, कि वे बहुत सुस्त थे। "चाहे हमारा लुक-चुंग (मेमना) झुंड से अलग-थलग हो जाए, या हमारे गांव का जिंग (ग्लेशियर से आने वाले पानी का जलाशय) लीक कर रहा हो, उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता था। वे जब बीज बोते थे, तो यूं लगता था जैसे उन्होंने आरक पी ली हो, और उन्हें नशा हो गया हो।" लेकिन वे उनकी खूबियाँ भी बताती थीं "बेशक वे खेती के काम में इतने माहिर नहीं थे, लेकिन वे एक अच्छे सोंगपा (कारोबारी) थे और इसी कारण वे हमेशा घर से दूर रहते थे। खेतों में सारे काम मैं ही करती थी, जैसे कि याक और ड्ज़ो के साथ हल चलाना।"

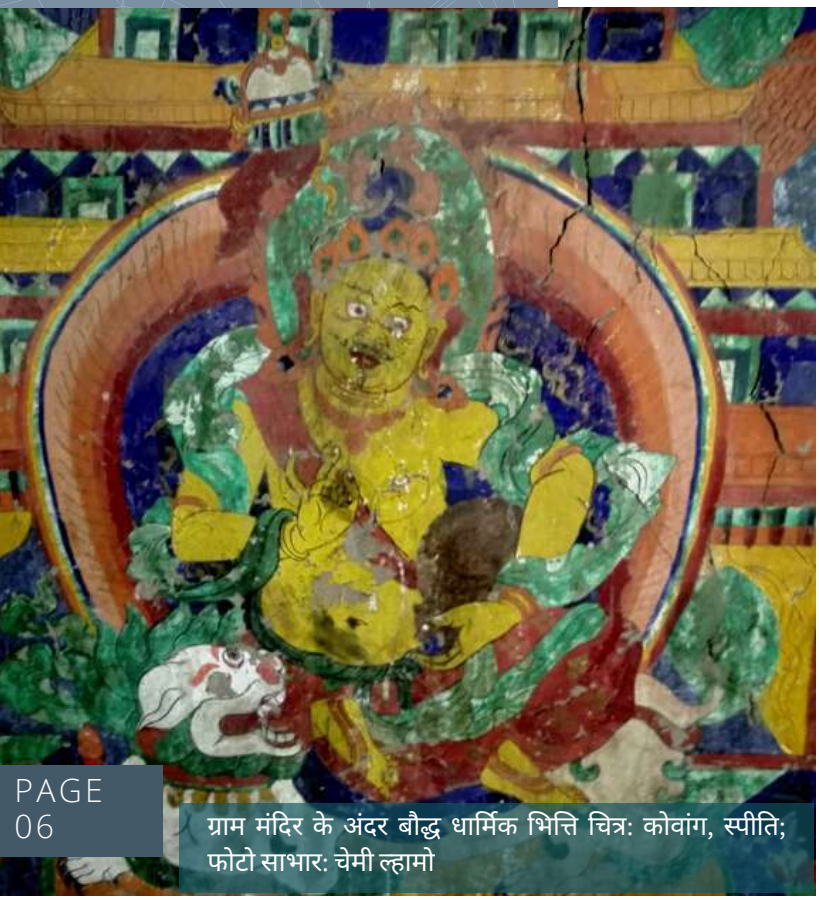

ग्राम मंदिर के अंदर बौद्ध धार्मिक भित्ति चित्र: कोवांग, स्पीति; फोटो साभार: चेमी ल्हामो

हमारे पूर्वज जिस कुदरती जगत में रहते थे, उसके हिसाब से इतनी अच्छी तरह ढल चुके थे कि स्पीति जैसे ऊंचाई वाले, मुश्किल इलाके में भी आराम से और आत्मनिर्भर तरीके से जिन्दगी बिताते थे। उनकी रोजमर्रा की जिन्दगी में उनकी बुद्धिमत्ता की जड़ें बहुत गहरी नजर आती हैं। ये लोग खेती से संबंधित शारीरिक मेहनत के काम से इतनी गहराई से जुड़े थे कि इन्हें ये पता था कि इस पर्यावरण प्रणाली के स्वास्थ्य का लाभ कैसे उठाया जाए, लेकिन फिर भी इनके अंशदानों को कोई खास महत्व नहीं दिया जाता।

स्पीति जैसे दूरदराज और कम संसाधन वाले स्थानों में रहने वाले लोगों के लिए, पर्यावरण से जुड़े उनके नियमों में कायाकल्प का बहुत महत्व है। बेशक वे इसके बारे में गहराई से समझा न पाएं, लेकिन उनकी जीवनशैली में ये बात स्पष्ट नजर आती है। उनका मानना है कि मूर्त,

अमूर्त, अभौतिक, भौतिक, सभी चीजों के बीच एक पर्यावरण प्रणाली के समग्र स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए एक पेचीदा संबंध मौजूद है।

एवी जब अपने खुले बाड़े में बकरियों के लिए सूखी घास डालती थीं तो अक्सर कहा करती थी "खेती का मतलब सिर्फ प्रकृति से आहार हासिल करना ही नहीं, ये कुंचोक सम (बुद्धत्व त्रिमूर्ति के तीन गहने) की कृपा का सम्मान भी है जो हमारी मिट्टी, हमारी जलधाराओं, हमारे चरागाहों और हमारे जानवरों की सेहत और खुशी का खयाल रखते हैं।" जब मैं छोटी थी, तो एवी एक श्रापग्रस्त 'स्रिनमॉस' (राक्षसी) की कहानी सुनाती थीं। वो कहती थीं कि हमारे गांव के विशाल और बंजर पहाड़ों के पीछे 'स्रिनमो-युल' (राक्षसी का इलाका) मौजूद है, जहाँ एक खतरनाक और भूखी राक्षसी रहती है। वो मुझे सावधान किया करती थीं कि अगर हमने अपने रिलुक-बलांग (मवेशी) हमारी जमीन और फसलों का ध्यान नहीं रखा, तो ये 'स्रिनमॉस' हमारे खेतों में आकर उन्हें और हमारे जानवरों को तबाह कर देगी। मैं उनकी कहानी पर विश्वास कर लेती थी, और गायों का दूध निकालने और मवेशियों का चारा देने जैसे कामों में उनकी मदद करती थी। अब सोचती हूं तो लगता है कि इस तरह वो मुझे अपने उस गहरे रिश्ते के बारे में बताया करती थी, जो उनका हमारी जमीन और मवेशियों के साथ था।

इस इलाके के साथ उनका जो अनोखा जुड़ाव था, वह कई दशकों तक इस जमीन के साथ जुड़े रहने का नतीजा था, फिर भी ये उतना सुखद नहीं है जितना लगता है। हमारे गांव के आसपास विशाल बंजर इलाका था, और लोग कम थे, तो यहाँ रहने के साथ कई चुनौतियाँ जुड़ी थी। उन्हें अकेला रहना अच्छा नहीं लगता था, और जब उनकी शादी हुई थी, तो वे यहां से अक्सर भाग जाती थीं, और फिर परिवार के सदस्य उन्हें समझा-बुझा कर वापिस लाते थे। ग्रामीण इलाकों में अलग-थलग रहने की वजह से वो इतनी बेचैन हो गईं कि ऐसे 'जादुई हादसों' के लिए प्रार्थना तक करने लगी, जो कोवांग को पास ही के, ज्यादा आबादी वाले गांव, कज़ा से मिला देता। जब उनकी उम्र काफी ज्यादा हो गई, तो उन्हें रांग्रिक में मेरे चाचा के परिवार के साथ रहने में ज्यादा आनंद मिलने लगा। लोग मुझसे अक्सर कहते थे कि मेरी एवी एक कमाल की कृषक थीं, लेकिन मैं सोचती हूं कि क्या मैं उनके उस जीवन को कभी समझ पाऊंगी जो गौरव और मार्मिकता से भरा था?

पहाड़ों में रहना हमेशा सुखद नहीं होता है। अलगाव और वियोग की भावना व्याप्त होती है; फोटो साभार: चेमी ल्हामो

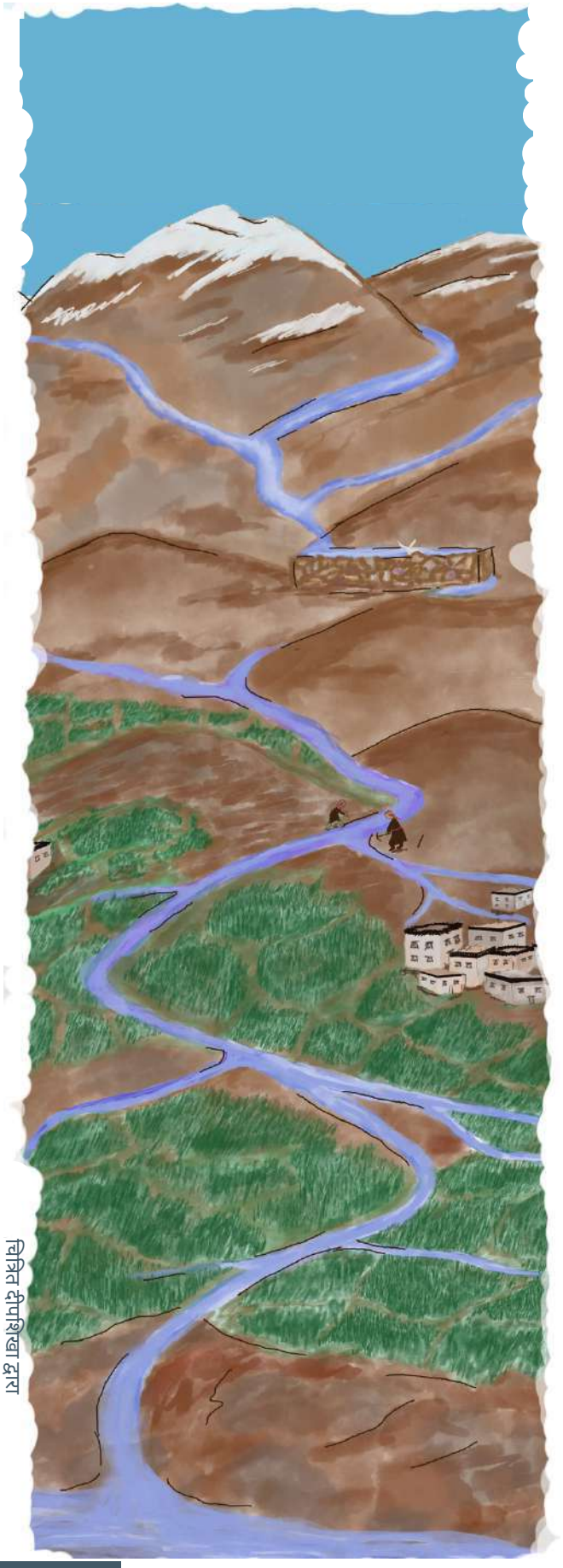

चित्रित दीपशिखा द्वारा

किब्बर के जल प्रबंधक

रंजिनी मुरली

सामने दूरी पर, पहाड़ की चोटियों पर सुबह-सुबह धूप की किरणें, जैसे छायाओं का पीछा करके उन्हें भगा रही थीं। मैं धूप वाले सुनहरे हिस्सों को देख कर ये सोच रही थी कि आखिर कब तक मैं इन किरणों की गरमाई का अनुभव कर पाऊंगी। लोबज़ांग ने मुझे देखा और हंसते हुए बोली, "ठंड लग रही है? मेरी मदद करो, इससे शरीर में गर्मी आएगी!"

लोबज़ांग अपने खेत में क्यारी बना रही थी। खेतों में बनी, मिट्टी की इस छोटी बाड़ से पानी आगे की तरफ बहता है। इन क्यारियों को जमीन के प्राकृतिक ढाल को ध्यान में रखकर बनाया जाता है। पास में थिन्ले दो याकों की मदद से अपने खेत जोत रहे थे। मैं स्पीति घाटी के किब्बर गांव में थी और खेती का मौसम अभी शुरू ही हुआ था। गांव की बैठक में, कुछ ही दिन पहले खेत जोतने के दिन का फैसला हुआ था।

"तुमने ये काम करना कैसे सीखा?" मैंने लोबज़ांग से ये पूछा। वह जिस महारत और रफ्तार से क्यारी बना रही थी, उसने मुझे आकर्षित किया। "मैं तो ये काम कई बरसों से कर रही हूं। मैं जब छोटी थी तो अपनी माँ की मदद करती थी, और मैंने ये काम उन्हीं से सीखा। इस साल क्योंकि काफी बर्फ गिरी है, तो पानी आसानी से उपलब्ध रहेगा।"

उसने मुझे बताया कि किब्बर में सिंचाई प्रणाली महिलाओं के अधिकार क्षेत्र में आती है। बर्फ का पिघला हुआ पानी कानमो से आता है, ये स्पीति की एक पवित्र चोटी है। खुल का इस्तेमाल करके, चोटी से आने वाले इस पानी को किब्बर के खेतों की ओर मोड़ दिया जाता है। सिंचाई की इस प्रणाली को शुरू में जौ और काले चने के लिए शुरू किया गया था, लेकिन अब हरी मटर की सिंचाई के लिए इसमें परिवर्तन किया गया है। लोबज़ांग ने मुझे बताया कि हरी मटर के लिए सिंचाई प्रणाली में जो बदलाव हुए, उनका श्रेय महिलाओं को जाता है। उन्होंने अपनी गलतियों से सीखा, लेकिन अब वे बखूबी जान चुकी हैं कि भरपूर उपज के लिए पानी कितना और कब चाहिए।

उसने मुझे बताया, "अगर आप समय से पहले, जरूरत से ज्यादा पानी देंगे तो पौधों की प्यास बढ़ती ही जाएगी। इसलिए पानी सही समय पर, और सही मात्रा में दिया जाना चाहिए।"

फसलों की अलग-अलग चक्रों में सिंचाई की जाती है और हर चक्र में

एक निश्चित क्रम का पालन किया जाता है। पहली सिंचाई को यूरमा कहते हैं। ये जुताई के 40 दिन बाद होती है। यूरमा से ठीक पहले, महिलाएं खेत से खर-पतवार हटाती हैं और उनमें सूखा हुआ यालो (एकोनोगोनम एसपी) डालती हैं। इससे मिट्टी का बहना रूकता है, और उसमें पानी देर तक ठहरता है। यूरमा के पहले दिन की सिंचाई आमची और देवता के खेतों के लिए आरक्षित होती है। पहले दिन सभी घरों की महिलाएं सिंचाई में हिस्सा लेती हैं, दूसरा दिन उन परिवारों के लिए आरक्षित रखा जाता है, जिनमें पिछले वर्ष कोई या तो गंभीर रूप से बीमार रहा है, या किसी की मृत्यु हुई है, या उनमें गर्भवती महिलाएं हैं, जो खेतों में काम नहीं कर सकती। टिपिंग लैंगजेट कहलाने वाले तीसरे दिन को उन परिवारों के लिए आरक्षित रखा जाता है, जिन्होंने जल मार्गों की देखरेख में हिस्सेदारी की होती है। तीसरे दिन के बाद बाकी बचे खेतों की सिंचाई की जाती है।

सिंचाई के पहले तीन चक्रों के दौरान इस क्रम का पालन किया जाता है, जिसके बाद सभी खेतों को तयशुदा बारी के अनुसार सिंचाई हासिल होती है। दूसरी और तीसरी सिंचाई के समय का निर्धारण महिलाएं करती हैं। महिलाएं ही रोजाना बांटे जाने वाले पानी का काम भी संभालती है। हर साल दो महिलाओं को खुल मैनेजर के तौर पर चुना जाता है। ये खुल का प्रबंधन संभालती हैं, ये सुनिश्चित करती हैं कि सभी खेतों को उनके भाग का पानी मिले, और पानी के वितरण के मामले में जो छोटे-मोटे मनमुटाव हो सकते हैं, उनका फैसला भी यही करती हैं। सिंचाई को महिलाओं द्वारा चलाए जाने की यही प्रणाली नेपाल और दक्षिण पूर्वी एशिया के कुछ दूसरे हिस्सों में भी नजर आती

रंजिनी मुरली

डॉक्टर रंजिनी मुरली स्नो लैपर्ड ट्रस्ट में कंजर्वेशन साइंटिस्ट हैं। वे भारत, किरगिस्तान और मंगोलिया जैसे देशों में हिम तेंदुए के संरक्षण और शोध से जुड़े प्रयासों में अपना योगदान देती रहती हैं। वे प्रशासन से जुड़े स्थानीय संस्थानों में विशेष रूचि रखती हैं।

चित्रित तेनज़िन मेटोक द्वारा

तस्वीरें एक ऑनलाइन स्रोत से ली गई हैं।

है। लेकिन, पूरी दुनिया में ऐसा कम ही है कि प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन महिलाएं करती हों। ज्यादातर प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन पुरूष करते हैं, खासकर वे संसाधन जो आपस में बांटे जाते हों। ये बात किब्बर और स्पीति के कुछ दूसरे हिस्सों की सिंचाई प्रणाली को विशेष बनाती है।

किब्बर में सिंचाई प्रणाली सदियों से मौजूद रही है। लोबज़ांग ने मुझे बताया कि जहां तक उन्हें या उनकी दादी माँ को याद है, ये प्रणाली बिन बदली ही रही है। सिंचाई से जुड़ा ज्ञान माँ से बेटी तक, पहुंचता है, जब से छोटी लड़कियाँ खेतों में उनकी मदद करना शुरू करती हैं।

सूर्य की किरणें आखिरकार उस जगह तक पहुंच गईं, जहाँ पर हम थे, और उन्होंने हमारे शरीर को गर्माना शुरू कर दिया। इससे क्यारी बनाने में लोबज़ांग की मदद करने का मेरा जज्बा और भी बढ़ गया। मैंने कहा, "मुझे दिखाओ, ये काम कैसे होता है। मैं उस महारत को सीखने के लिए उत्सुक हूं, जो पीढ़ियों से एक से दूसरी महिला तक पहुंचती रही है।" क्या आपके गांव में भी सिंचाई प्रणालियां वैसी ही हैं जैसी किब्बर में? हमें लिखकर उनके बारे में बताइयेगा जरूर।

स्पीति घाटी में शुष्क शौचालयों का पर्यावरणीय

सोनम यांगजॉम

स्पीति घाटी, हिमाचल प्रदेश के भारतीय हिमालयी भाग में मौजूद एक ग्रामीण और खुश्क पहाड़ी क्षेत्र है। ये घाटी क्योंकि एक ठंडे रेगिस्तान में है, तो गर्मियों में यहां बहुत कम बारिश होती है, और ये फसलों के पनपने के लिए पर्याप्त नहीं होती। पानी पर निर्भरता पूरी तरह ग्लेशियरों तक सिमटी रहती है, जिनका पानी 'टॉकपोस' कहलाने वाली जलधाराओं, और 'यूरा' कहलाने वाली छोटी नदियों में इकट्ठा होता है। स्थानीय समुदाय 'टॉकपोस' के आसपास ही बसते हैं। जहां से यूरा के जरिये पानी खेतों तक पहुंचाया जाता है। यहां के किसान खेती तो करते हैं लेकिन बहुत कम बारिश की वजह से इन्हें ग्लेशियर के पानी से अपने खेतों की सिंचाई के मुश्किल काम को अंजाम देना पड़ता है। इसके अलावा सर्दियों में स्पीति को पानी की कमी का भी सामना करना पड़ता है, और इस कारण लोग पानी की रोजमर्रा की जरूरत को पूरा करने के लिए पाइप लाइनों पर (ज्यादातर गांवों में पाइप लाइन नहीं है) हैंड पम्प पर निर्भर करते हैं। हैंड पम्प शून्य से भी नीचे वाले तापमान के कारण जम जाते हैं और उनका इस्तेमाल नहीं हो पाता। शुष्क शौचालयों की मौजूदगी की वजह से पानी की कमी उतनी नहीं खलती,

क्योंकि उनमें फ्लश करने के लिए पानी की जरूरत नहीं पड़ती है, साथ ही उनसे खेतों के लिए प्राकृति खाद भी तैयार हो जाती है।

अगर स्पीति की पारंपरिक कृषि पद्धतियों पर गहराई से नजर डालें, तो पता चलता है कि स्वच्छता से जुड़ा निजी क्षेत्र से संबंधित स्थानीय ज्ञान किस प्रकार न केवल स्वच्छता की आधुनिक प्रणालियों के डिजाइन पर प्रतीकात्मक सवाल उठाता है, बल्कि विकास और आधुनिकता की उस विरोधाभास को भी सुर्खरू करता है, जिसकी शहरों में भरमार है। हम जो भी संरचनात्मक प्रगति समाज में ला रहे हैं, अगर वे

इसलिए स्पीति में 'वेस्ट' यानी कचरा नाम की कोई चीज ही नहीं होती। स्पीति के शौचालय के डिजाइन और यहां के नाजुक पर्यावास के बीच के इस रिश्ते के कारण फसलें अच्छी होती हैं, और इस क्षेत्र को पानी के संकट का सामना भी नहीं करना पड़ता

उस क्षेत्र के पर्यावास से मेल नहीं खाती, जहां ये विकास हो रहा है, तो फिर उसे प्रगति कैसे कहा जा सकता है? यदि प्रकृति के संसाधनों को नुकसान पहुंचा कर ऐसा किया जा रहा है, तो क्या इसे सचमुच प्रगति कहा जा सकता है?

हम हिमालय के इन ठंडे क्षेत्रों में पीढ़ियों से शुष्क शौचालय इस्तेमाल करते आए हैं। इन्हें कम्पोस्टिंग शौचालय भी कहा जाता है, और ये आधुनिक ईको-सैन शौचालयों के प्राचीन प्रारूप हैं। इसमें दो लैवल होते हैं, ऊपर शौचालय होता है, और कम्पोस्टिंग ईकाई होती है। शौचालय का प्रयोग करने के बाद हम एक सुराख से मल पर मिट्टी (अधिकतर राख, सूखी घास या सूखा गोबर) डाल देते हैं, इससे अति सूक्ष्म जीवों द्वारा मल को सड़ाने में मदद मिलती है। मिट्टी के कारण मल ढंक जाता है, और उसमें से दुर्गन्ध भी नहीं आती है। इतना ही नहीं, इन शौचालयों के लिए पानी भी नहीं चाहिए। हर साल के अंत में हम हर घर की कम्पोस्टिंग ईकाई को हमारे पड़ोसियों, मित्रों और रिश्तेदारों की मदद से साफ करते हैं। ये एक सामुदायिक प्रयास होता है, और तब तक मल, अक्सर पूरी तरह सूख चुका होता है। जुताई के मौसम से पहले, इस प्राकृतिक खाद को खेतों में डाल दिया जाता है। इसलिए स्पीति में 'वेस्ट' यानी कचरा नाम की कोई चीज ही नहीं होती। स्पीति के शौचालय के डिजाइन और यहाँ के नाजुक पर्यावास के बीच के इस रिश्ते के कारण फसलें अच्छी होती हैं, और इस क्षेत्र को पानी के संकट का सामना भी नहीं करना पड़ता। इस प्रकार शुष्क शौचालयों का प्रयोग ठंडे रेगिस्तान की भौगोलिक मजबूरियों से उपजा, एक पर्यावरण अनुकूल ज्ञान है, और सर्दियों में विशेष रूप से उपयोगी साबित होता है, जब पानी जम जाता है। लेकिन यहाँ सैलानियों की संख्या बढ़ने और आधुनिकता के प्रभाव के कारण ऐसी पुरानी प्रणालियों का न केवल प्रभाव कम हो रहा है, बल्कि अगर बात शौचालयों के निर्माण की हो, तो ये स्थानीय ज्ञान के

तस्वीरें एक ऑनलाइन स्रोत से ली गई हैं।

रास्ते में बाधा भी बन रहा है, और ढांचागत सुविधाओं की सामयिक मौजूदगी में भी रोड़े अटका रहा है।

शौचालय डिजाइन का प्रतीकवाद

बेशक स्वच्छता एक निजी मामला है, लेकिन ये काफी राजनीतिक भी है। इस पर वर्ग, जाति और उन भौगोलिक परिस्थितियों का गहरा असर पड़ता है, जिनमें लोग जन्म लेते हैं। जाति, वर्ग और लिंग-आधारित अंतरों वाले जिस समाज में हम रहते हैं, वहाँ हमारी रोजमर्रा की चीजें और संरचनाएं सांकेतिक मायनों से भरी है, और उनके राजनीतिक संदर्भ भी होते हैं। इन संरचनाओं से जुड़ी ज्यादातर सांकेतिकता को विकास का भारी वजन झेलना पड़ रहा है, और इसे ढोने की उम्मीद हमसे की जाती है। आधुनिकता का

चित्रित मालविका द्वारा

लेकिन आधुनिकता आने से सफाई प्रणाली के डिजाइन की कामयाबी इस बात के जरिये नापी जाती है कि मल को कितनी अच्छी तरह 'अदृश्य' बनाया जा सकता है।

चित्रित मालविका द्वारा

भार सीमान्त समुदायों को ढोना पड़ रहा है, जो सामाजिक, बौद्धिक और आर्थिक तौर पर कम साधन सम्पन्न हैं।

स्पीति के शुष्क शौचालयों में, ये बात सब जानते हैं कि मल कहाँ जा रहा है। मल सड़ कर खाद बन जाता है, और लोग इसके साथ खुद को जोड़कर देख पाते हैं। यहाँ 'प्रयोग करने वाला' और 'सफाई करने वाला' एक ही व्यक्ति है। लेकिन आधुनिकता आने से सफाई प्रणाली के डिजाइन की कामयाबी इस बात के जरिये नापी जाती है कि मल को कितनी अच्छी तरह 'अदृश्य' बनाया जा सकता है। किसी को इस बात की जानकारी नहीं होती कि ये मल जा कहाँ रहा है। फ्लश वाले शौचालयों में मल पानी से बहा दिया जाता है, ये सीवर में जाता है, और फ्लश इस्तेमाल करने वालों को यह फिर नजर ही नहीं आता। ये मल सीवरों में और सैप्टिक टैंकों में पड़ा रहता है, और फिर इसे वे लोग बाहर निकालते हैं जो अपनी जाति के कारण ऐसा करने पर मजबूर हों। जानबूझ कर और अन्जाने में, आधुनिक शौचालय और सफाई प्रणालियाँ समाज में मौजूद असमानता को और बढ़ावा देती है, और एक तरह से गंदगी, जाति और सफाई संबंधी कार्य को कलंकित कर देती है। बाहर के लोगों के लिए, ये शुष्क

शौचालय एक तरह से इस क्षेत्र के 'पिछड़ेपन' का प्रतीक हैं। इन शौचालयों को नीची नजर से देखा जाता है, और एक तरह से ये उस विकास के स्तर का संकेतक बन जाते हैं जिसे हासिल नहीं किया जा सकता है। जब मैं अपने एक दोस्त को अपने परिवार से मिलाने स्पीति ले गई, तो मेरे माता-पिता ने फोन पर जो सबसे पहली बात कही, वह थी "हमारे यहां अच्छा टॉयलेट नहीं है। क्या तुम्हारी दोस्त हमारे पारंपरिक शौचालय से काम चला पाएगी?" कथित 'विकास' की अंधी दौड़ और टॉयलेट की डिजाइन प्रणालियों के वर्गीकरण की वजह से पारंपरिक शौचालय शर्मिन्दगी की वजह बन गए हैं और एक तरह से स्पीति के लोगों को उनके 'पिछड़ेपन' का अहसास कराते रहते हैं। इसकी वजह से स्पीति के लोगों को लगता है कि वे आधुनिकता की दौड़ के साथ कदम नहीं मिला पा रहे हैं।

पर्यटन का शौचालय के डिजाइन पर प्रभाव

हाल के बरसों में, स्पीति पर्यटन का एक प्रमुख केन्द्र बन गया है। सैलानियों को सेवाएं देने के लिए, काजा जैसे कस्बों ने कई रैस्टोरैंट और होटल बनाए हैं जिनमें फ्लश वाले आधुनिक शौचालय और बाथरूम मौजूद हैं। इस आधुनिक दौर और सैलानियों का ध्यान रखते हुए इनके मालिकों ने भूजल को निकालने के लिए बोरवैल भी बनाए हैं। कम बारिश होने के कारण भू-जल को रीचार्ज करने में बहुत समय लग सकता है। भू-जल के खत्म होने से सर्दियों में पानी की कमी बहुत गंभीर हो जाती है। सैलानियों के आने और आधुनिक ढांचागत सुविधाओं के प्रभाव की वजह से शहरों में रहने वाले स्पीति के लोग पर्यावरण के प्रति संवेदनशील अपने पारंपरिक ज्ञान से दूर हो गए हैं जिसे शौचालयों के निर्माण में इस्तेमाल किया जाता था। विकास के नाम पर, और 'आधुनिकता' की अंधी दौड़ में स्थानीय ज्ञान का महत्व लगातार कम होता जा रहा है।

आज के दौर में विकास के नाम पर सब कुछ हो रहा है, इस सिलसिले में संदर्भ को ध्यान में नहीं रखा जा रहा। स्पीति के शुष्क शौचालय इस बात के प्रतीक बन गए हैं कि कोई कितना 'पिछड़ा' हुआ या कितना 'विकसित' है। इस तरह शौचालय सफाई के मामले में इस बात का प्रतीक बन गए हैं कि किसी का क्या रूतबा है, और विकास के मामले में उसकी स्थिति क्या है। शुष्क शौचालय के सुराख से दिखता मल अस्वच्छ माना जाता है। स्पीति के शुष्क शौचालय, इसलिए, न केवल यह दर्शातें हैं कि विकास के आसपास के बड़े राजनीतिक प्रवचन से 'व्यक्तिगत' कैसे जुड़ा हुआ है और प्रभावित है, लेकिन यह भी कि इन्फ्रास्ट्रक्चर या सैनिटेशन डिज़ाइन सिस्टम कैसे शक्ति, शर्म और पिछड़ेपन के सामाजिक मूल्यों के भीतर फंस गया है।

सोनम यांगजॉम

सोनम यांगजॉम स्पीति की पिन घाटी से हैं। वे सोशोलॉजी और एंथ्रोपोलॉजी के तीसरे वर्ष की पढ़ाई कर रही हैं और अशोका यूनिवर्सिटी से एन्वायरमैंटल स्टडीज का अध्ययन भी कर रही हैं। आपको लिखना और अपनी पसंद की जगहों तथा लोगों के बारे में वीडियो बनाना अच्छा लगता है।

चित्रित मालविका द्वारा

लाहौल-स्पीति और किन्नौर 2020 में अनाज और सब्जियों की कीमतें

लैंडस्केप	गाँव	अनाज और सब्जियां			
		हरे मटर	काले मटर	सेब	आलू
स्पीति	किब्बर	रुपये 80/किलोग्राम	रुपये 150/किलोग्राम	शून्य	स्वयं उपभोग
स्पीति	लोसर	रुपये 75 - 80/किलोग्राम	रुपये 200/किलोग्राम	शून्य	स्वयं उपभोग
स्पीति	ताबो	रुपये 65 - 70/किलोग्राम	शून्य	रुपये 1,800 - 2,000/बॉक्स	शून्य
स्पीति	पिनवैली	रुपये 75 - 80/किलोग्राम	रुपये 200 - 250/किलोग्राम	शून्य	स्वयं उपभोग
किन्नौर	नाको	रुपये 110 - 170/किलोग्राम	शून्य	रुपये 1,100 - 1,800/बॉक्स	रुपये 900 - 1,100/बॉक्स
किन्नौर	लिओ	रुपये 72/किलोग्राम	शून्य	रुपये 1575/बॉक्स	शून्य
किन्नौर	शाल्कर	रुपये 37 - 66/किलोग्राम	शून्य	रुपये 1,250 - 1,750/बॉक्स	शून्य
लाहौल	केलॉन्ग	रुपये 80 - 90/किलोग्राम	शून्य	रुपये 1,200 - 1,800/बॉक्स	रुपये 600 - 900/बॉक्स
लाहौल	उदयपुर	रुपये 80 - 90/किलोग्राम	शून्य	रुपये 700 - 1,375/बॉक्स	रुपये 900 - 1,000/बॉक्स

लैंडस्केप	गाँव	अनाज और सब्जियां			
		जौ	ब्रोकोली	फूलगोभी	खुबानी
स्पीति	किब्बर	रुपये 42/किलोग्राम	शून्य	शून्य	शून्य
स्पीति	लोसर	रुपये 45/किलोग्राम	शून्य	शून्य	शून्य
स्पीति	ताबो	शून्य	शून्य	शून्य	रुपये 150 - 250/किलोग्राम
स्पीति	पिनवैली	स्वयं उपभोग	शून्य	शून्य	शून्य
किन्नौर	नाको	स्वयं उपभोग	शून्य	शून्य	रुपये 350 - 380/किलोग्राम
किन्नौर	लिओ	शून्य	शून्य	शून्य	रुपये 300/किलोग्राम
किन्नौर	शाल्कर	शून्य	शून्य	शून्य	रुपये 90 - 200/किलोग्राम
लाहौल	केलॉन्ग	शून्य	रुपये 170/किलोग्राम	रुपये 35 - 40/किलोग्राम	शून्य
लाहौल	उदयपुर	स्वयं उपभोग	रुपये 70 - 90/किलोग्राम	रुपये 40 - 45/किलोग्राम	शून्य

*एक डिब्बा लगभग 25 किलोग्राम का है।

ऊपर सूचीबद्ध मूल्य स्थानीय लोगों द्वारा बताए गए हैं और आधिकारिक दरों को नहीं दर्शाते हैं।

Young Explorers

ओ रिगज़िन, जुले!

सच में! क्या है बताओ?

अरे वाह! उसने पत्र में क्या लिखा है?

हां, हां, जरूर।

ओ ताशी!

आज मैं तुम्हें एक दिलचस्प बात बताना चाहती हूँ

क्या शहर में तुम्हारे दोस्त हैं?

नहीं। भला शहर में मेरे दोस्त कैसे हो सकते हैं?

मुझे आज अपने एक मित्र से पत्र मिला है, जो मुंबई से है, और उसने ये पत्र सभी को संबोधित किया है।

क्या तुम खुद इसे पढ़ना नहीं चाहोगे?

स्पीति घाटी के मेरे प्रिय मित्रों,

जुले! आप सब लोग कैसे हैं? आशा है आप सब लोग स्वस्थ होंगे, और ये महामारी आपके इन इलाकों में नहीं पहुंची होगी। मैं यह पत्र आपको ये बताने के लिए लिख रहा हूं कि मैंने स्पीति के 'पहाड़ों का भूत' या हिम तेंदुए के बारे में क्या सीखा है। मुझे पता चला है कि हिम तेंदुआ बड़ी बिल्लियों की, बहुत ही कमाल की प्रजाति है, और कुदरत ने इन्हें ऐसी खूबी दी है कि ये अपने दिमाग और आंखों को जीपीएस की तरह इस्तेमाल करते हैं, और अपने पर्यावास में खुद को शानदार ढंग से छिपा भी लेते हैं।

इस क्षेत्र की पर्यावरण प्रणाली बहुत नाजुक है, और इन इलाकों में, विशेषकर पेड़-पौधों के संबंध में स्थिति काफी विकट हो सकती है। वहां पेड़-पौधे कम होने के कारण खुराक में मांस की अधिकता रहती है। जिन समस्याओं का सामना आप करते हैं, जानवरों को भी वही झेलनी पड़ती है। कभी-कभी हिम तेंदुआ खुराक ढूंढ़ते हुए इंसानी बस्ती में आता होगा और कई भेड़ों या बकरियों को मार भी देता होगा। ऐसे में इन इलाकों के लोगों को काफी नुकसान भी होता होगा। अगर कभी आप किसी हिम तेंदुए को पकड़ लेते हैं, तो कृपा करके उसे मारिएगा नहीं, क्योंकि ये जीव भी अपना पेट भरने के लिए ऐसा करता है। आप इसके समाधान के तौर पर भेड़ों या बकरियों के लिए बड़े बाड़े बना सकते हैं, ताकि तेंदुआ इंसानी बस्ती में न आए, और शिकार की अपनी योग्यता गंवा न दे। उम्मीद है आप ऐसे समाधानों को अपनाएंगे, या फिर इस जीव को बचाने के लिए कुछ नए रास्ते खोजेंगे।

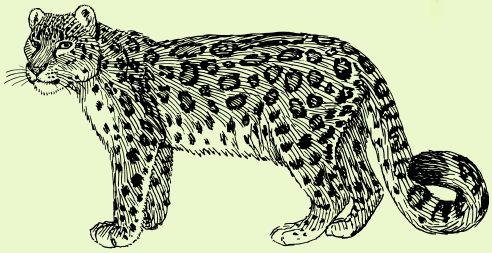

आपका
राहुल

मैं राहुल की बात से पूरी तरह सहमत हूं। हम पहाड़ों के बीच एक बहुत ही खूबसूरत दुनिया में रहते हैं। ये बेशकीमती है, और हमें इसे बचाए रखना चाहिए।

मुझे लगता है कि राहुल को यह भी आश्चर्य होगा कि उच्च पर्वतीय गांवों में रहना कैसा होता है। आइए पसांग ल्हामो द्वारा लिखित उनके गाँव की जीवनशैली की व्याख्या को पढ़ें उच्च पर्वतीय इलाकों के जीवन के बारे में और जानें। वह स्पीति के लालुंग गांव की है।

मेरा गाँव

घर

मेरे गाँव में एक घर है। मेरे घर से पहाड़ दिखते हैं। मेरे घर के पीछे बहुत सारे पेड़-पौधे हैं। मेरे घर के पास रंग बिरंगे फूल हैं। मेरी खिड़की का रंग काला है। मेरे घर की छत पर घास सूखती है। मेरे घर की छत पर एक सीढ़ी भी है। और छाता, सोलर भी है। मेरे घर के दरवाजे के आगे दीवारें हैं। यह दीवार बाड़ा बनाने के लिए है।

बाड़ा

मेरे घर में एक बाड़ा है जहाँ पर बकरियों को रखा जाता है। मेरे घर के बाहर दो हरे-भरे पेड़ हैं। मेरे पास नौ बकरियां हैं। बाड़े के नीचे रंग बिरंगे फूल और घास हैं जिन्हें बकरियां खाती हैं। हम बकरियों को इसलिए पालते हैं क्योंकि हमें उनका दूध, ऊन और मांस चाहिए।

खेत

मेरे गाँव में मटर के खेत हैं। मेरे गाँव की मटर मीठी है। मटर के फूल का रंग सफेद है। मुझे मटर खाना बहुत अच्छा लगता है। मेरे गाँव के खेत हरे भरे हैं। मेरे खेत के आस-पास घास और रंग-बिरंगे फूल हैं।

नदी

खेत के पास एक नदी है। नदी को पार करने के लिए एक पुल है जो लकड़ी से बना है। नदी का पानी बहुत ठंडा है।

लोग वहां कपड़े धोने भी आते हैं। नदी का पानी पहाड़ों के ऊपर की बर्फ से पिघल कर आता है। नदी के पार बहुत सारी घास और रंग-बिरंगे फूल हैं।

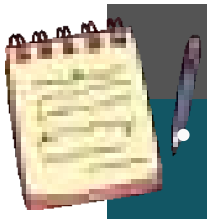

Activity

- क्या आपको चिट्ठियां लिखना अच्छा लगता है? एक अज्ञात मित्र को पत्र लिखिए और उसे अपने गृहनगर के बारे में बताइये, कि वहां रहना कैसा लगता है, आसपास का प्राकृतिक परिवेश कैसा है, और आपको इसकी कौन सी बात सबसे अच्छी लगती है।
- अपना पत्र भेजें या अपने उचित पते के साथ हमें मेल करें और अपने नए दोस्त से सुनने के लिए प्रतीक्षा करें!
- ई-मेलः himkathaindia@gmail.com
- कॉल करें या WhatsApp: + 91 765 000 2777

Attributions:

Green Compass - Letter by Rahul
Let's Open A Book - Pasang Lamo's Short Story
Illustrations: Rohit rao, Pasang Lhamo

हिमालयी कृषि

अमशु सी. आर.

मैं हिमालय के पहाड़ों में, समुद्र तल से 14 हजार 200 फुट की ऊंचाई पर याक को देखने की उम्मीद कर रही थी, जिसके लिए मैं 2016 की गर्मियों में मैसूर से स्पीति के किब्बर गांव आई थी। गांव से चरागाह तक का रास्ता काफी मुश्किल था, लेकिन मेरे साथ गांव की दो लड़कियां - लोब्जांग और तेनजिन थीं। हमें रास्ते में कई खेत मिले जहाँ गांव वाले हरे मटर उगा रहे थे। ऐसे मुश्किल और दूरदराज क्षेत्र में किसी नकदी फसल का नजर आना अनोखी बात थी। उन्होंने बताया कि पिछले कुछ दशकों में कैसे यहाँ नकदी खेती ने जड़े जमाई थीं और नई सड़कों के बनने और पर्यटन के जरिये इन दूरदराज जगहों में कई संभावनाएं पनपने लगी थी। "हम आज भी अपने इस्तेमाल के लिए जौ उगाते हैं। हरी मटर तो सिर्फ बाहरी बाजार के लिए उगाई जाती है।" जौ एक खाद्यान्न है जो ऊपरी हिमाचल के वासियों की मुख्य खुराक है। ये विशेषकर लम्बी सर्दियों के दौरान पोषण मुहैया कराती है, जब खाने की दूसरी चीजें नियमित रूप से नहीं मिल पाती हैं। लेकिन मार्केटिंग के अवसरों की कमी के कारण, स्पीति के बाहर इसकी बहुत कम मांग है। इन लड़कियों से बात करने के बाद मेरे दिमाग में 'थपसु' का विचार आया।

थपसु मुनाफा कमाने वाली एक कम्पनी है, जो किसानों और दूसरे सहयोगियों के साथ कई स्तरों पर काम करती है ताकि कृषि पोषण-समृद्ध और सर्व-सुलभ हो सके। हमें आशा है कि हम एकदम जमीनी स्तर पर काम करके कृषि से जुड़े ज्ञान और उससे जुड़ी जैव विविधता को संरक्षित रख पाएंगे। हमारे काम की शुरूआत 2016 के आरंभ में हुई, जब कुछ शोधकर्ताओं और भारत सरकार की मदद से हमने दो किसानों - दीपक और पूनम के साथ इसका शुभारंभ किया। हमने लाल चावल की जट्टू किस्म को उगाने और उसकी मार्केटिंग से शुरूआत की। इसमें काफी कामयाबी मिली। तब से थपासु जनजातीय किसानों के साथ काम कर रही है, ताकि विभिन्न स्थानीय और वन्य उत्पादों को उगाया जाए, उनका मूल्य संवर्धन हो और उनकी मार्केटिंग की जाए, जिससे कृषि के प्राकृतिक और जैविक रूप को बढ़ावा मिले। ऐसे उत्पादों में शामिल हैं - जौ, सी बकथॉर्न (जंगली बैरी), काला मटर, रोडोडैनडैरॉन यानी बुरास, रोज हिप्स और टारटरी

फ़ोटो साभार थपसु

अम्शु सी. आर.

अम्शु सी.आर. हिमाचल प्रदेश के जनजातीय गांवों के लिए एक कम लागत के वहनीय एग्री-हाइब्रिड मॉडल के निर्माण पर पिछले 5 साल से काम करती रही हैं। उनकी पृष्ठभूमि ग्लोबल मार्केटिंग की रही है, और उन्होंने Cardiff Business School से एमबीए किया है। आप www.thapasu.com पर जाकर किसान समूहों से जुड़े उनके काम के बारे में और जानकारी हासिल कर सकते हैं।

बकवीट। आज हिमाचल के तीन जिलों के (लाहौल और स्पीति, कुल्लू और मंडी) लगभग 3200 किसान हमसे जुडे हैं। इसके अलावा कर्नाटक के दो जिले (मांड्या और हसन) और लेह, लद्दाख के कुछ क्षेत्र भी हमसे जुड़ गए हैं।

थपासु 'फार्म से स्टोर' मॉडल पर काम करती है। ये सांस्थानिक साझेदारियों और सरकारी योजनाओं की मदद से स्थानीय किस्मों की मार्केटिंग करती है। सांस्थानिक गठजोड़ों के माध्यम से, थपासु नई टैक्नॉलॉजी विकसित करने के क्षेत्र में भी काम करती है, फिर ये तकनीकें किसानों और स्व-सहायता समूहों को स्थानांतरित की जाती हैं, ताकि वे उपज को अंतिम उत्पाद की शक्ल दे सकें।

हमारा 10 प्रतिशत मुनाफा हमारी कृषि संबंधी विभिन्न सेवाओं के जरिये वापिस समुदाय को मिलता है, ये सेवाएं हम किसानों को देते हैं, और इनमें शामिल है मिट्टी की जांच, जमीन का मापन, सरकार की तरफ से सैमी प्रॉसैसिंग सब्सिडी, कौशल प्रशिक्षण और नई टैक्नॉलॉजी को अमल में लाना। हमारी टीम में आठ लोग शामिल हैं जिनमें हिमालय क्षेत्र में इस काम को संभव बनाने के लिए विभिन्न कौशल हैं जिन्हें वे यहाँ के लोगों के साथ बांटते हैं।

पिछले 5-6 दशकों के दौरान खानपान की आदतों में बहुत फर्क आया है, लेकिन स्थानीय आहार प्रणालियों को बचाने का महत्व हमें अभी हाल ही में समझ आया है। जैव विविधता किसी पर्यावरण प्रणाली के स्वास्थ्य की मुख्य संकेतक होती है। लेकिन जंगली और स्थानीय खाद्यान्न किस्मों के विलुप्त होने का अज्ञात प्रभाव हो सकता है, जिनसे कभी-कभी सम्पूर्ण पर्यावरण प्रणालियाँ ही तबाह हो जाती हैं। देश के कुछ हिस्सों में आज भी प्राचीन उत्पाद उग रहे हैं, विशेषकर जहाँ जलवायु संबंधी स्थिति बहुत बेरहम और

फोटो साभार थपसु

मुश्किल हैं। कारण ये है कि ये किस्में सूखा झेल जाती हैं, नाइट्रोजन की मात्रा को सहीकरती हैं और जलवायु संबंधी उग्र स्थितियों के बावजूद इनकी मौजूदगी बनी रहती है। जबकि इसी कार्य को करने के लिए, बाहर से यहाँ लाई गई फसलों को यहाँ निवेश वस्तुओं की जरूरत पड़ती है। लेकिन हम ये भी देख रहे हैं कि देश के सबसे दूरदराज हिस्सों में भी प्राचीन और पारंपरिक फसलों के बजाय नई किस्में इस्तेमाल की जा रही हैं। जो कुछ फिलहाल बचा-खुचा है, उसे सुरक्षित रखने का सबसे अच्छा तरीका ये है कि हम आधुनिक कृषि पद्धतियों को भूल जाएं, पारंपरिक प्रणालियों को फिर से अपनाएं और एक ऐसी चक्रीकृत प्रणाली बनाएं जिससे किसान, उपभोक्ता और पर्यावरण, सभी को लाभ हो।

फोटो साभार थपसु

थपसु क्यों?
पुराने दौर की फसलें उगाने वाले किसान अक्सर इन्हें अपने लिए ही उगाते हैं। लेकिन रोजी कमाने के लिए इन लोगों को मौजूदा दौर की फसलें उगानी पड़ती हैं, और उनमें रसायनिक उर्वरक और कीटनाशक इस्तेमाल किए जाते हैं। इससे मिट्टी की गुणवत्ता प्रभावित होती है और लम्बी अवधि में समुदाय के लोगों की सेहत पर भी बुरा असर पड़ता है। थपसु जैविक रूप से उगाए जाने वाले उत्पादों के लिए एक बाजार सुनिश्चित करता है, और उस खाई को भरता है जो पारंपरिक एग्रो मार्केटिंग संरचना में आम नजर आती है।

थपसु की कार्यशैली क्या है?
जो भी किसान जैविक तरीके से पुरानी फसलें उगाता है, वह हमसे सम्पर्क कर सकता है, और हम उनकी उपज को बाहर के बाजार में बेचने में मदद करते हैं। उपज की गुणवत्ता और पोषण संबंधी महत्व का जायजा लेने के बाद हम इस उत्पाद की मार्केटिंग और बिक्री एक थपसु उत्पाद के तौर पर शुरू करते हैं। हम किसान से उपज की एक तय मात्रा खरीदते हैं, और यह अक्सर किसान के पास ही सुरक्षित रखी रहती है। जब हमें हमारी वैबसाइट (www.thapasu.com) पर कोई ऑर्डर आता है, तो हम किसान से कहते हैं कि वह डाक के जरिये उस पते पर पैकेज भेज दे। अगर बड़े ऑर्डर होते हैं तो फिर उन्हें हम ही संभालते हैं।

किसानों को भुगतान कैसे किया जाता है?
हम जब किसानों से उनकी उपज खरीदते हैं, तब उन्हें भुगतान होता है। यह रकम सीधे किसान के बैंक खाते में जाती है। अगर किसान का किसी बैंक में खाता नहीं होता, तो फिर भुगतान हमारे स्थानीय अधिकृत व्यक्ति द्वारा नकद रूप में किया जाता है।

किसान को कितना हिस्सा प्राप्त होता है?
कुल कमाए जाने वाले मुनाफे का 50 प्रतिशत तक किसान को या तो प्रत्यक्ष आय या हमारे द्वारा प्रदान की गई सेवाओं के भाग के रूप में जाता है।

थपसु द्वारा प्रदान की जाने वाली अन्य सेवाएं?
जैविक खेती करने वाले किसान या जो किसान जैविक कृषि की ओर मुड़ना चाहते हैं, वे अपने खेतों या उपज से जुड़ी मुश्किलों पर चर्चा करने या विचार विमर्श के लिए हमसे सम्पर्क कर सकते हैं। दूसरे संस्थानों के साथ मिलकर हम किसानों के साथ नियमित रूप से वर्कशॉप भी आयोजित करते हैं, ताकि वे जैविक खेती की ओर मुड़ सकें, और अपनी क्षमताओं को और बेहतर बना सकें। हम मिट्टी का परीक्षण, लैंड मैपिंग भी करते हैं, और सरकारी सब्सिडी प्राप्त करने के सिलसिले में किसानों की मदद भी करते हैं।

किसान आप तक कैसे पहुंच सकते हैं?
आप या तो कॉल कर सकते हैं, या अपने नाम के साथ +919731408844 पर मैसेज भेज सकते हैं। आप amshu@thapasu.com पर ई-मेल भी भेज सकते हैं, या मनाली के हमारे कार्यालय में आकर मिल भी सकते हैं। पता है: THAPASU Centre 83/7, सियाल गांव, पोस्ट ऑफिस मनाली 175131, कुल्लू जिला, हिमाचल प्रदेश, भारत।

हमें लिखें

हर जगह की एक अनूठी कहानी होती है: अपनी संस्कृति,
अपनी परंपराओं और प्रथाओं के बारे में।
हिमकथा ऐसी ही कहानियों को बांटने का एक मंच और आपके अलावा शायद ही उन्हे कोई बेहतर ढंग से सुना पायेगा !

तो, इस समाचार पत्र के माध्यम से हमारे अनुभवों, हमारे गांवों की कहानियों, परंपराओं, प्रथाओं को एक दूसरे के साथ और दुनिया के बाकी हिस्सों के साथ साझा करें। यदि आपके पास समाचार पत्र के संबंध में कोई प्रतिक्रिया, सुझाव या शिकायत है, तो कृपया हमें बताएं।इस ई-मेल पते / नंबर पर अपने नाम और संपर्क विवरण के साथ कहानियां, प्रतिक्रिया, तस्वीरें आदि भेजें।

ईमेल: **himkathaindia@gmail.com**
कॉल / व्हाट्सएप: **+ 91 765 000 2777**
वेबसाइट: **www.himkatha.org**

वैकल्पिक रूप से, आप इस पते पर हमें मेल कर सकते हैं:

Nature Conservation Foundation
1311 “Amritha”, 12th A Main,
Vijayanagara, Mysore, 570017
Karnataka

Team Credits:

Editor: Chemi Lhamo
Newsletter Design: Deepshikha Sharma
Newsletter Logo: Shrunga Srirama
Translation: Arya Atul, Translation Professionals, Virendra Mathur, Deepshikha Sharma
Design Medium: Canva Pro